ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(4): 373-376
www.allresearchjournal.com
Received: 07-02-2021
Accepted: 13-03-2021

गुरजीत कौर
हिन्दी विभाग, गुरू नानक कॉलेज, बुढलाडा, पंजाब, भारत।

Corresponding Author:
गुरजीत कौर
हिन्दी विभाग, गुरू नानक कॉलेज, बुढलाडा, पंजाब, भारत।

शेष यात्रा उपन्यास में अस्तित्व की कशमकश

गुरजीत कौर

सारांश
अस्तित्ववाद पाश्चात्य जगत की देन है। यह एक ऐसा दर्शन है जो मनुष्य के अस्तित्व को महत्व देता है। अस्तित्ववादी विचारकों की दो विचारधाराएं सामने आती हैं। एक विचारधारा आस्तिक अस्तित्ववादियों की है। ये ईश्वरवादी दार्शनिक अपनी आत्मा के भीतर ईश्वरीय सत्ता का अनुभव करते हैं एवं ईश्वर को मनुष्य पर हावी भी नहीं होने देते। कीर्केगार्द, जैस्पर्स और मार्शल आस्तिक अस्तित्ववादियों में से प्रमुख हैं। नास्तिक अस्तित्ववादी दार्शनिकों में ज्याँ पाल सार्त्र, फ्रेडरिक नीत्शे और मार्टिन हीडेगर प्रमुख रूप से ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास न रखने वाले दार्शनिक हैं। नीत्शे तो ईश्वर के मरने की घोषणा करते हैं। हीडेगर ने तो यह तक कह दिया कि ईश्वर द्वारा मनुष्य इस संसार में फेंक दिया गया है। अब उसको स्वयं अपने कार्यों का चुनाव करना है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अलग पहचान एवं अपना अस्तित्व चाहता है। समाज में रहते हुए वह अपने अस्तित्व को निखारना चाहता है लेकिन कई बार परिस्थितियाँ ऐसी हो जाती हैं कि वह अपनी अभिव्यक्ति के लिए उचित वातावरण नहीं पाता। तब अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों को सुधारने हेतु वह हरसंभव प्रयास करने शुरू कर देता है। निरन्तर संघर्षरत रहकर वह हालातों को अनुकूल करने की कोशिश करता है एवं उचित वातावरण न मिलने पर भी अपने निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति कर लेता है। अस्तित्ववादी दार्शनिकों का मानना है कि व्यक्ति अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है। उसको किसी दूसरे पर आश्रित रहने की आवश्यकता नहीं है। उषा प्रियंवदा ने मानवीय संवेदनाओं को सामने लाने का भरसक प्रयास किया है। उषा प्रियंवदा के शेष यात्रा उपन्यास में मानव के संघर्षशील जीवन, संत्रास, कुंठा, अनास्था आदि की अभिव्यक्ति हुई है। आधुनिक काल में मानव स्वार्थपरकता के कारण ही अजनबीपन का शिकार हो गया है। अकेलापन, ऊब, संत्रास, कुंठा, अनास्था, स्वतंत्रता, अजनबीपन आदि अस्तित्ववाद की सभी विशेषताएँ शेष यात्रा में देखने को मिलती हैं।

कूटशब्दः अस्तित्ववाद, आधुनिकता, संघर्ष, अकेलापन, अजनबीपन, संत्रास

प्रस्तावना
जब कोई व्यक्ति अपने समाज एवं परिवार में अपने ढंग से जीना चाहता है लेकिन मुश्किलों से घिरे होने के कारण वह ऐसा नहीं कर पाता, तब शुरू होती है अस्तित्व की कशमकश। मशीनी युग के दौर में मानव उसी के अनुरूप चलने को विवश है। वह सामाजिक मान्यताओं में भी जकड़ा हुआ है। जिसके चलते उसका अस्तित्व नष्ट हो जाता है। अस्तित्वविहीन मानव का अजनबी हो जाना स्वाभाविक है। पाश्चात्य दर्शन अस्तित्ववाद ने मानवीय सत्ता और अस्तित्व पर बल दिया। हिन्दी साहित्य जगत में उच्च कोटि के साहित्यकार एवं सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में बहुत से लोग ऐसे हैं जो कलम के माध्यम सामाजिक समस्याओं को प्रस्तुत करने में बहुत संवेदनशील रहे हैं। आधुनिक काल के साहित्यकारों ने अपनी कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन, परिस्थितियों और विसंगतियों को हमेशा से ही समाज के सामने पेश करने में तत्परता दिखाई है। उषा प्रियंवदा आधुनिकेता–बोध की लेखिका है। भारतीय और पाश्चात्य परिस्थितियों का द्वन्द्व उनके कथा–साहित्य की विशेषता है। जहाँ तक मेरी समझ है उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का मुख्य उद्देश्य नारी को उसकी दयनीय स्थिति से बाहर निकालकर उसके अस्तित्व को निखारना है।

अध्ययन का उद्देश्य
इस शोध कार्य का उद्देश्य प्रवासी भारतीयों के अकेलेपन, अजनबीपन, संत्रास और कुंठा को प्रस्तुत करना है। 'अनु' के माध्यम से यह बताया है कि मुश्किलों के बावजूद मनुष्य संघर्षरत रहकर सफलता की सीढ़ी चढ़ जाता है।

शेष यात्रा उपन्यास में अस्तित्ववादी दर्शन

आधुनिक हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में महिला साहित्यकारों का योगदान प्रशंसनीय रहा है। उषा प्रियंवदा एक प्रसिद्ध कथाकार के रूप में जानी जाती है। पश्चिमी विचार धाराओं में से अस्तित्ववादी दर्शन का प्रभाव उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य पर परिलक्षित होता है। उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में अनेक विडंबनाओं, आशाओं, निराशाओं, विषमताओं और कटुता का सूक्ष्म अंकन हुआ है। बदलते समाज के संबंधों में आई हर छोटी से छोटी बात पर उषा प्रियंवदा ने अपनी पैनी दृष्टि रखी है। भारतीय समाज की स्थिति एवं परिवेश में मानव की स्थिति तथा उसके संघर्षमय जीवन की दयनीय स्थिति का चित्रण करते हुए लेखिका ने नवीन मूल्यों की स्थापना की है। स्त्री अपने जीवन में पारिवारिक और सामाजिक धरातल पर सबसे अधिक शोषित और प्रताड़ित हुई है। बचपन से लेकर बुढ़ापे तक जीवन के प्रत्येक पद पर मां, पत्नी, बेटी, प्रेमिका, बहु के रूप में बहुत सी विपरीत परिस्थितियों के कारण भी वह संघर्षमय जीवन बिता रही है। उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में अस्तित्ववादी दर्शन को अभिव्यक्त किया है। उन्होंने अपने उपन्यासों में नारी की आर्थिक विवशता से उत्पन्न मानसिक यंत्रणा का चित्रांकन किया है।

एक साहित्यकार का मंतव्य लोक हित होता है। लोगों के संघर्ष को साहित्य के माध्यम से समाज तक पहुंचाना ही साहित्यकारों का मुख्य उद्देश्य होता है। आधुनिक युग की भागदौड़ और स्वार्थपरकता के कारण मनुष्य अकेलेपन का शिकार हो गया है। उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में आधुनिक जीवन में परिव्याप्त स्वार्थ भावना का सजीव चित्रण किया है। उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'शेष यात्रा' में आधुनिक नारी–जीवन की घुटन, ऊब, संत्रास, कुंठा, निराशा, अकेलेपन आदि का चित्रांकन किया है। इस उपन्यास की नायिका अनु सामाजिक और पारिवारिक रूप से शोषण का शिकार तो है ही इसके साथ ही उसको अकेलेपन और संत्रास ने घेर रखा है। कुछ पंक्तियां इस उपन्यास की जिनमें से अकेलेपन की झलक मिलती है,

''घिरते हुए अँधेरे के साथ बेचैनी बढ़ने लगती है, सिर्फ उसी की नहीं। जैसे एक और अकेली रात का सामना करने के खयाल से ही दिल डूबने लगता है,.....शायद वैसा ही खोखलापन, वैसा ही निर्दोष असहायता, अपने पंगु होने की अनुभूति और हर वक्त टिक–टिक करता हुआ बेबसी का एहसास, जिसकी कोई दवा नहीं, जिसका कोई इलाज नहीं।''

'अनु' एक विवेक सम्पन्न, सहृदय और संवेदनशील नारी है। वह जो चाहती है कर नहीं सकती और जो नहीं चाहती, वह करती चली जाती है– यही उसके जीवन की विडम्बना है। 'शेष यात्रा' उपन्यास में 'अनु' नामक नायिका और प्रणव नायक है। इस उपन्यास में उच्च– मध्यवर्गीय प्रवासी भारतीय समाज अपने तमाम अंतर्विरोधों, व्यामोहों और कुंठाओं के साथ मौजूद है। अनु इस उपन्यास में अपने मन की कोमलता के बावजूद जागते स्वाभिमान और कठोर जीवन– संघर्ष की प्रतीक है। उपन्यास की केंद्र बिन्दु अनु भारतीय है लेकिन अपने जीवन के उतार चढ़ाव में वह अकेली अमेरिका जा पहुंचती है। पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने के बाद जो उसके अंतर्द्वंद्व में चलता है उसका चित्रण इस उपन्यास में सरलता से देखने को मिलता है। प्रश्न हमारे समक्ष खड़े हो जाते हैं कि क्या संस्कृति का विलय एवं परिवर्तन है जिससे हम अपने आप से कटते चले जा रहे है? क्या परिस्थितियां ऐसी हो गई हैं कि हम अकेलेपन में निवास करना पसंद करते हैं? क्या मनुष्य में स्वार्थ इतना अधिक घर कर गया है कि उसके इतर उसे सब शून्य नजर आता है?

एक भारतीय नारी की स्थिति को लेखिका ने इस उपन्यास के शुरू में दिखाया है। बहुत ही भोली–भाली अनु एक पाश्चात्य परिवेश में पले प्रणव की पत्नी बन जाती है। एक दिखावे की जिन्दगी जीने वाले पति की पत्नी। इसके विपरीत अनु ने तो दिखावे का अर्थ भी नहीं समझा था अभी। बिना माँ–बाप के ननिहाल में पलने वाली, हमेशा उतरन पहनकर जीने वाली लड़की क्या समझ पाएगी पश्चिमी सभ्यता। इसीलिए तो रेखा प्रणव को कहती है,

''प्रणव टेक केयर ऑफ हर, शी इज जस्ट ए किड।''

प्रणव, अनु को सम्बोधन करके कहता है कि मैं इसको सारे शहर की रानी बनाकर रखूँगा। ऐसी लुभावनी बातों के तले शुरू होती है अनु के अस्तित्व की कहानी। उसके चारों तरफ बहुत ही लुभावना वातावरण है। वह सोचती है कि अब स्कूल का समय गया, अल्हड़पन के दिन बीत गए हैं, अब तो चारों तरफ सब कुछ नया–नया ही नज़र आता है। वह पश्चिम संस्कृति में अपने आपको घिरा हुआ पाती है, जिससे कि वो अपरिचित है। उसकी छोटी मामी हमेशा कहती आई है–''तेरा क्या होगा लड़की? तूने दुनियादारी नहीं सीखी, आदमी को पहचानना नहीं जाना। हरेक पर भरोसा कर लेती है, हरेक को अपना मान लेती है, कैसे कटेगी जिन्दगी।''

घर गृहस्थी को चलाने के लिए अनु अंतर्राष्ट्रीय महिला संघ की तरफ से पैंफलेट में से कुछ नुकते सीखती है। अमेरिका में वह एक सुघर गृहिणी बनकर रहना चाहती है। अब तक तो अनु और प्रणव को लोग 'गोल्डन कपल' कहकर पुकारते थे। अनु को भी अपना भाग्योदय लग रहा है। बहुत खुश थी हमारी भारतीय 'अनु'। बड़ी–बड़ी मीटिंगों में जाना, प्रणव की पसंद को अहमीयत देना, अपनी दुनिया में किसी तरह की कमी को न देखना आदि अनु के गृहस्थी जिन्दगी के शुरूआती दिन थे।

अजनबीपन

शादी के कुछ दिनों बाद अनु अकेलेपन की शिकार होती है जब प्रणव किसी मीटिंग में तीन दिन के लिए जाता है। प्रणव का समय पर न मुड़ना, बहाने बनाना और अनु का अकेले रहना इन सब बातों के कारण अनु का कुंठित होना स्वाभाविक था। अनु के पूछने पर प्रणव द्वारा उसको बेवकूफ बताकर कहना कि मुझे तो तेरे जैसी मूर्ख लड़की ही चाहिए थी। यह मजाक में कही हुई बात प्रणव की वास्तविकता को सामने लाकर रख देती है। इन्हीं वाक्यों ने नायिका के अस्तित्व को ठेस पहुँचाई। एक के बाद एक ऐसे ही प्रणव का असली चेहरा एक सीधी सादी भारतीय औरत के सामने आने लगा।

भारत का एक ऐसा अलभ्य रत्न प्रणव को मिला था जिसकी परख उसको नहीं थी। वह एक ऐसा जोहरी था जो अमूल्य रत्न को छोड़कर खोखले पत्थरों के पीछे भागता था। उसकी हिंसक प्रवृत्तियों ने अनु को अन्दर से झकझोर दिया था। शादी के तीन–चार साल बाद तो प्रणव ने अनु के साथ पार्टियों में जाना भी छोड़ दिया। अनु को भी अकेले जाना अच्छा नहीं लगता तो वह अकेले घर में बैठकर सारी शाम टीवी से आँखें फोड़ती है। प्रणव बार–बार उसको कहता है कि वह अपना व्यक्तित्व बनाए, उसको किसी का इन्तजार नहीं करना चाहिए। इन पक्तियों ने अनु के अस्तित्व को बनाने में काफी सहायता की :–

''मैं चाहता हूँ कि तुम मुझ पर इतनी निर्भर न रहो। मुझसे अलग अपना व्यक्तित्व बनाओ। आत्मनिर्भर बनो। तब तो तुम बच्ची थी, एकदम अबोध। अब तो यहाँ चार–पाँच साल से हो, वह बचपना अब क्यूट नहीं लगता।''

प्रणव के इन शब्दों से अनु कहीं न कहीं कुछ सोचने पर मजबूर होती है कि वह कुछ करे। पति को अस्पताल में अनिश्चित अवधि की छुट्टी देकर सामान बाँधते हुए वह देखती है तो उसको फिर से वही अकेलेपन का डर सताने लगता है। वह सोचती है कि एक दिन वह इसी डर के कारण मर जाएगी। अब तो उसका मुँह फुलाना, अनबोला, भूख–हड़ताल सभी कुछ व्यर्थ था। वह हार मान लेती है। सोचती है अब तो जीवन क्या ऐसे ही अकेले रहकर कटेगा ? क्या मैं कुछ नहीं कर पाऊँगी ? प्रणव अनु को प्रत्येक निमन्त्रण स्वीकार करने, पार्टियों में जाने, लोगों से मिलने–जुलने के लिए कहता है। परन्तु अनु एक भारतीय नारी है

ऐसे हर रोज शाम को अकेले पार्टियों में जाना, शराब पीना, व्यर्थ में ही घूमना–फिरना उसको अच्छा नहीं लगता। इन सब बातों के अलावा एक ऐसी बात थी जिससे अनु बिल्कुल ही अनभिज्ञ थी जो उसकी एक पड़ोसिन ज्योत्सना बेन उसको आकर बताती है,

''अनु तुम अपना भला–बुरा सोचो। इस लीक को क्यों पकड़े बैठी हो? अपने को गला रही हो। प्रणव तो हमेशा से ही ऐसा था, कभी किसी का होकर रहा है? शादी से पहले भी उसके कितने सम्बन्ध रह चुके हैं। नई–नई नर्सें.....हम लोग तो सब जानते हैं, देखते आए हैं, सोचा था, तुम्हें पाकर सुधर जाएगा, मगर.....।''

इन वाक्यों से तो अनु के अन्दर हजारों ज्वालामुखी फूटने लगते हैं। एक बवंडर की तरह। प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण, प्रणव के धोखा देने के कारण एवं अकेलेपन के कारण ही अनु के स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है। सबसे बड़ा कारण था कि अनु की भावनाओं को ठेस पहुँची है। घर का सारा सामान तहस–नहस करके उसने अपने बिखरते हुए अस्तित्व को ओर बिखरने दिया। जब होश आया तो वह अस्पताल में दाखिल थी। प्रणव एवं लोगों द्वारा पागल करार देना ये तो उसके लिए असहाय हो जाता है। डॉक्टर के जाने के बाद अनु अकेले में बिलखने लगती है,

''गॉड, ओ गॉड हेल्प मी। मेरी मदद करो, मुझे शक्ति दो।..... फिर एकदम शक्तिहीन होकर पलँग पर गिर पड़ती है। उसका दिमाग खाली है, सुन्न। भावशून्य। मुख के ऊपर काली पुतलियाँ स्थिर, होंठ गिरे हुए। रक्तहीन शरीर। 'क्या होगा?' या 'कैसे जिऊँगी की आकुल पुकार भी चुप, थकी हुई।''

हमारे देश की यह विशेषता है कि यहाँ वैवाहिक बन्धन को जीवन पर्यन्त चलने वाला बन्धन माना जाता है। डॉक्टर गुडमैन के बताने पर कि प्रणव कहता है उसके लिए यह मैरिज बहुत पहले मर चुकी है। अनु अपने भारतीय संस्कारों को सामने लाते हए कहती है कि पेड़–पौधे, जीव–जन्तु, आदमी–औरतें ये सभी तो मरते देखें हैं कहीं आपने मैरिज भी मरते देखी है, खासतौर से हिन्दुस्तानी मैरिज भी कभी मरी है?

इन सभी घटनाओं से तो अनु का अस्तित्व पूरी तरह बिखर चुका है। उसका जीवन उलझी हुई ऊन की तरह उलझ चुका है जिसको सुलझाना मुश्किल लगता है। पिता की असफलताएँ, अम्मा की पराजय, ननिहाल में उतरन पहनकर बड़े होने की ग्लानि, शादी के बाद एक सफल डॉक्टर की पत्नी बल्कि अब फिर से वही अजनबीपन। यही बात बार–बार उसको परेशान करती है। सुबह होती है, सारा दिन अकेले, शाम को फिर रात को ऐसे ही अकेलेपन का ख्याल आने से ही उसका दिल डूबने लगता है। वह सोचती है कि डॉक्टर के पास हर मर्ज की दवा होती है,

''अगर तनाव हो तो ढीला करने की दवा, अगर दुखी हो तो खुश करने की दवा। अनु चुपचाप सुनती है। उसे ऐसे निष्क्रिय, उदास, अकेले, अपने में डूबे–डूबे बहुत समय हो चला है।''

अस्तित्व की तलाश

वहीं अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण में अनु की एक भारतीय सहेली दिव्या उसको अस्पताल से लेने आती है। दिव्या और जयन्त पाकिस्तानी रेस्तराँ में काम करते हैं। हिन्दुस्तानी–पाकिस्तानी सभी वहाँ मिलजुल कर रहते हैं। वह अनु को भी बहुत समझाती है। बात–बात पर उसको कहती है कि तुम अपने स्वतन्त्र अस्तित्व की मालिक हो। अपनी इच्छा से कुछ भी कर सकती हो। वह कहती है,

''सुनो अनु, तुम कब तक अपने सारे अस्तित्व को प्रणव–नाम की खूँटी पर टाँगें रहोगी। उस शख्स ने तो तुम्हारी खबर भी नहीं ली कि कहाँ हो, कैसी हो?'' अब दिव्या नामक बहुत ही खुले विचारों की लड़की ने अनु के डूबते हुए अस्तित्व को जगाया। बहुत ही अच्छे शब्दों में उसने अनु को समझाया कि उस शख्स ने तेरी बिल्कुल भी कद्र नहीं की, अब रोने बिसूरने की बजाए, प्रणव कुमार को अपनी जिन्दगी से जाने दो। एक नए सिरे से जिन्दगी की शुरूआत करो अस्तित्वविहीन होकर नहीं। आत्मनिर्भर बनकर।

जिन्दगी एक सन्तुलित नाव की तरह होती है। थोड़ा–सा भी सन्तुलन बिगड़ने पर हमें एकाग्रता की आवश्यकता पड़ती है। यही तो अनु को करना है अपनी डगमगाती जीवन नैया को किनारे पर पहुँचाना है। दिव्या ने उसके गिरते हुए आत्मसम्मान को जगाया है। मानसिक क्रूरता का ब्यौरा प्रणव ने, लोगों को एवं वकील को अनु के मानसिक अत्याचारों के बारे में बताया कि उसको पागलपन के दौरे पड़ते हैं जिसके कारण वह अपनी सुध–बुध खो बैठती है और अभद्र गालियाँ देती है। प्रणव ने तो ऐसी झूठी बातें बनाकर तलाक ले लिया। इस प्रकार प्रणव स्वतन्त्र हो गया, अकेला, उन्मुक्त और बन्धनहीन। चन्द्रिका से भी मन भरने के बाद प्रणव बिल्कुल स्वतन्त्र अपने 'स्व' से जूझता हुआ घूमता है। चारों तरफ एकान्त और सन्नाटा। अब तो वेशभूषा भी इतनी प्रभावशाली नहीं रही थी। उसमें एक विसंगति की तरह, पुरानी आरामपरस्त जिन्दगी के अवशेष ही रह गए थे। अब प्रणव की जिन्दगी में सन्नाटा छाने लगा था। वहीं छुट्टी और सप्ताहांत में ट्रैफिक–दुर्घटनाएँ और हार्टअटैक बहुत होते थे। बिना किसी परिवार के और अकेले होने के कारण प्रणव को ही अक्सर सप्ताहांत की ड्यूटी मिलती थी। इन सब बातों से अब प्रणव को भी अकेलेपन का अहसास होने लगा था। लेकिन प्रणव को यह अकेलापन बुरा नहीं लगता था। अपने आचरण पर भी उसको ज़रा सा भी खेद नहीं था। अकेले रहना उसको इतना अच्छा लगता था कि किसी भी मूल्य पर उसे त्यागने को वह तैयार नहीं था।

प्रवासी भारतीयों का रहन–सहन, आदतें सब कुछ वहीं रहता है चाहे वो कैलीफोर्निया हो या उत्तरी कैनेडा या न्यूयॉर्क हो। प्रणव एक घूमने–फिरने वाला ऐसा पक्षी है जो दोबारा अपने घोंसले में वापिस नहीं आता। स्वतन्त्र है बिल्कुल स्वतन्त्र। एक बार पीछे छोड़ आने पर फिर से उसी माहौल में प्रवेश करना उसे बहुत उबाऊ और खाली लगता था। स्वतन्त्रता, सन्नाटा, खालीपन और अकेलापन प्रणव को बहुत सुखद लगता था।

''कितना सुखद शान्तिदायक है यह सन्नाटा, यह बर्फानी लैंडस्केप। प्रणव को अपनी भटकन, अपने अन्दर की आँधी कुछ थमती लगती है। वह आसपास से बर्फ बटोरकर धीमी पड़ती आग पर डाल उसे बुझा देता है। फिर अच्छी तरह उसे दबाकर वह उठ खड़ा होता है।''

प्रणव की हालत अब ऐसी थी कि वह अजनबीपन का शिकार हो जाता है। उसको किसी के प्रति मोह नहीं है, लगाव बचा भी है तो सिर्फ फोटोग्राफी के कैमरे से और पसन्द की शराब से। यही निर्मोही होना उसके लिए तब घातक सिद्ध हुआ जब शूल जैसे दर्द के साथ एम्बुलैंस के द्वारा अस्पताल में पहुँचाने पर डॉक्टर ने हार्ट अटैक बताया। डॉक्टर को भी वह बताता है कि मैं कहीं टिककर नहीं रहता, ऊबता हूँ तो चल देता हूँ।

जिन्दगी एक अजीब मोड़ लेती है। एक घुमक्कड़ और स्वतन्त्र प्रवृत्ति वाले प्रणव की उसी अस्पताल में दस साल बाद अनु से भेंट होती है। बिना मेकअप के अनु, न वह टिकुली, न नाक पर पाँच हीरों वाली लौंग। वह तो एक डॉक्टर के रूप में नेवी ब्लू स्कर्ट और सफेद ब्लाऊज, उसके ऊपर डॉक्टरी कोट। हैरानी का ठिकाना नहीं रहता। अब उसके सामने एक आत्मनिर्भर नारी खड़ी है। तलाक के बाद इस पहली मुलाकात में ही वह सोचता है कि क्या हम सचमुच इतने दूर इतने अजनबी हो गए है कि इधर–उधर की बातों से समय की खाई को भर रहे हैं। दोनों अनु की सहेली दिव्या और उसके पति जयन्त की बातों में अपने आपको उलझा लेते हैं।

कहीं न कहीं प्रणव को अनुभव हुआ कि अब अनु भोली–भाली गुड़िया नहीं है। वह एक आत्मविश्वासी, सन्तुलित, लापरवाह–सी, सादगी से भरपूर एक डॉक्टर के रूप में खड़ी है। दस सालों ने

अनु के साथ न्याय किया है, उसके अस्तित्व को निखारा है। उसको तोड़ा नहीं है। इस पुनर्मिलन पर अनु द्वारा जॉनी वॉकर व्हिस्की की एक बोतल निकालकर मेज पर रखना, प्रणव को एकदम अचम्भित कर देता है। अपनी जिन्दगी के बारे में प्रणव बताता है कि दो बाइपास हो गए हैं फिर भी तकलीफ रहती है। बुरी आदतें छोड़ने की बात करता हुआ वह कहता है,

''अनु तुम मेरी जिन्दगी पास से देखोगी तो विश्वास नहीं करोगी। सिवा सिगरेट.....और कभी–कभी शराब के .....सभी पुरानी आदतें छूट गई हैं।'' अनु को इतना तंग करने के बाद प्रणव अब पछताता है। अनु के प्रति न जाने क्या–क्या उसके मन में उमड़ता है। ममत्व, दुलार, करूणा, मोह आदि। आज उसका दिल करता है कि दुनिया की सारी खुशियाँ उस पर लौटा दे। वह चाहकर भी पिछले दस सालों का लेखा–जोखा अनु को नहीं दे पाता। कितना कुछ जिया, झेला, कितनों से जुड़ा, कितने ठिकाने बनाए और कितनी बार सब कुछ एक निष्ठुरता, एक अलगाव से तोड़कर आगे बढ़ गया। इसके विपरीत अनु ने इन दस सालों में अकेलेपन के दौरान अपने अस्तित्व को बिखरने नहीं दिया। इस दौरान ही वह महसूस करती है कि एक व्यक्ति की हैसियत से वह कुछ नहीं थी। कुछ नौकरियाँ की, कुछ कर्ज लिए, इस प्रकार पेट के बल रेंगते हुए सैनिक की तरह उसने भी मुश्किल परिस्थितियों रूपी पुल को पार कर लिया। नोबल प्राइज विजेता की रिसर्च टीम में वह डॉक्टर बन जाती है। आज उसने अपनी माँ की इच्छा पूरी कर ली। प्रणव तो वैसा ही है, आज भी खाली हाथ।

''जब मैं कहता हूँ कि मैं अकेला हूँ, तो उसका मतलब है एकदम अकेला, बिना घर–बार, बिना बीवी–बच्चों के, एकदम अकेला और सन्तुष्ट..... ।''

अनु को अब यह समझ आ गया था कि अगर परिस्थितियों ने उसे ऐसे न ढकेला होता तो आज वह भी पूरी तरह प्रणव पर निर्भर रहकर, एक सफल डॉक्टर की निकम्मी बीवी बनकर परम्परागत स्क्रिप्ट जीती रहती। एक पढ़ी–लिखी डॉक्टर, एक बच्ची की माँ, दुनियादारी में कुशल औरत अब पीछे मुड़कर नहीं देखना चाहती।

निष्कर्ष

नायिका हार नहीं मानती एवं अपने आत्म विश्वास को एकजुट कर पुनः एक जीतती हुई जंग का ऐलान करती नजर आती है। यही तो जीवन है, अंतर्विरोधों की भूमि। यही अस्तित्ववादी दर्शन देखने को मिलता है, इस उपन्यास में। अनु ने अपने साथ हुए अत्याचार से अपने–आपको डूबने नहीं दिया बल्कि कठिन संघर्ष के साथ, दुःखों रूपी सागर को पार करके खुद को नई जिन्दगी दी। अपने अस्तित्व का निर्माण स्वयं किया। अस्तित्ववादी दार्शनिक भी यही कहते हैं कि मनुष्य अपने भविष्य का निर्माण खुद करता है। यह उस पर निर्भर करता है कि वह अपने भविष्य को उज्ज्वल कैसे बनाता है? अपने नए पति दीपांकर से मिलने से पहले ही उसने खुद को संभाल लिया था। एक अकेली खूबसूरत औरत बिना किसी सहारे के उसको क्या–क्या झेलना पड़ता है यह उसने सीख लिया था। कहीं न कहीं अनु को 10 साल की संघर्षमयी जिन्दगी के बाद अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की खुशी तो है ही इसके साथ–साथ प्रणव के अकेलेपन, उसके रोगग्रस्त होने से उसको बहुत दुःख पहुँचता है क्योंकि वह एक भारतीय नारी है और प्रणव के साथ उसका रिश्ता रह चुका है। पलँग पर पड़ा रोग से ग्रस्त जिन्दगी से टूटा हुआ हुआ प्रणव और उसके पास बैठी भरी–पूरी अनु। इस उपन्यास में आधुनिक जीवन की ऊब भरी जिंदगी और छटपटाहट झलकती है। आधुनिक उपन्यासों में आज के युग में मनुष्य के अपने और समाज के बीच हुए अलगाव को प्रस्तुत किया गया है।

संदर्भ

1. अस्तित्ववाद के प्रमुख विचारक, डॉ लक्ष्मी सक्सेना, डॉ सभाजीत मिश्र, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, संस्करण द्वित्तीय 2002.
2. हिन्दी उपन्यास : एक नई दृष्टि, इन्द्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं 1975.
3. पाश्चात्य दर्शन के सम्प्रदाय, डॉ शोभा निगम, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1998.
4. आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद, डॉ शिवप्रसाद सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1998.
5. शेष यात्रा, उषा प्रियंवदा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण द्वित्तीय 2013. पृष्ठ सं. 23.
6. पृष्ठ सं. 52.
7. पृष्ठ सं. 59.
8. पृष्ठ सं 61.
9. पृष्ठ सं 73.
10. पृष्ठ सं 78.
11. पृष्ठ सं 107.
12. पृष्ठ सं 110.
13. पृष्ठ सं 116
14. पृष्ठ सं 117
15. पृष्ठ सं 119